सोलह भावना एवं सम्यक् ध्यान शतक
ज्ञानवर्धन प्रतियोगिता
भाद्रपद माह 2022
तीर्थोदय काव्य एवं सम्यक् ध्यान शतक का स्वाध्याय
सोलहकारण पर्व में करें विशेष धर्मध्यान एवं
जीतें आकर्षक पुरूस्कार ...बनें प्रतियोगिता के विजेता
यह तीर्थोदय काव्य एवं सम्यक् ध्यान शतक सिद्धांत भूषण विशेष
पदवी हेतु स्वीकृत किया गया है ..इस कोर्स को अवश्य करें
प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु 9174843674

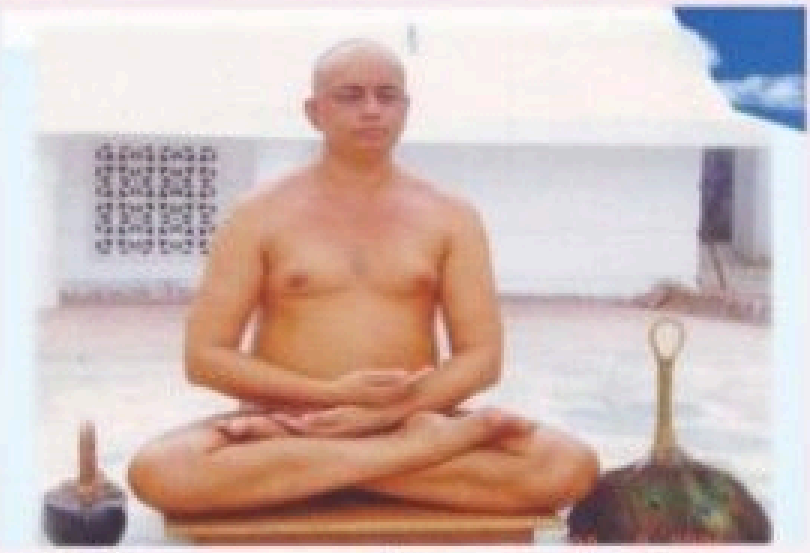

आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज

पूर्व नाम	- पारसचंद जैन
पिता जी	- श्री शिखरचंद जैन
माता जी	- श्रीमती मायाबाई जैन
जन्मतिथि	- ११.९.१९६७, भाद्र शु. अष्टमी
जन्म स्थल	- फुटेरा कलाँ, जिला- दमोह
बचपन बीता	- पथरिया, जिला- दमोह (म.प्र.) में
शिक्षण	- बी.ए. (प्रथम वर्ष) डिग्री कॉलेज, दमोह (म.प्र.)
ब्रह्मचर्य व्रत	- १९.१२.१९८४, अतिशय क्षेत्र, पनागर(म.प्र.)
सातवीं प्रतिमा	- १९८५, सिद्धक्षेत्र, अहारजी
क्षुल्लक दीक्षा	- ८.११.८५, सिद्धक्षेत्र, अहारजी
ऐलक दीक्षा	- १०.७.१९८७, अतिशय क्षेत्र, थूवोनजी
मुनि दीक्षा	- ३१.३.१९८८, सिद्धक्षेत्र, सोनागिरजी, महावीर जयन्ती सन् १९८८
दीक्षा गुरु	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज
आचार्यपद	- २५.०१.२०१५ (माघ शुक्ल षष्ठी) को (समाधि पूर्व आचार्यश्री सीमंधरसागर जी द्वारा इंदौर में)
कृतियाँ व रचनाएँ	- धर्म-भावना शतक, जैनागम-संस्कार, तीर्थोदय-काव्य, परमार्थ-साधना, बचपन का संस्कार, सम्यक्-ध्यान शतक, आर्जव-वाणी, पर्यूषण-पीयूष, आर्जव-कविताएँ, जिनवर-स्तुति, साम्य-भावना, आगम-अनुयोग, जैन शासन का हृदय, लोक कल्याण (षोडसकारण) विधान, सदाचार सूक्ति-काव्य।
पद्यानुवाद	- गोमटेशथुदि, जिनागम-संग्रह(बारसाणुवेक्खा, इष्टोपदेश, समाधितन्त्र, द्रव्य-संग्रह), तत्त्वसार एवं प्रश्नोत्तर-रत्नमालिका।

सम्यक् ध्यान शतक

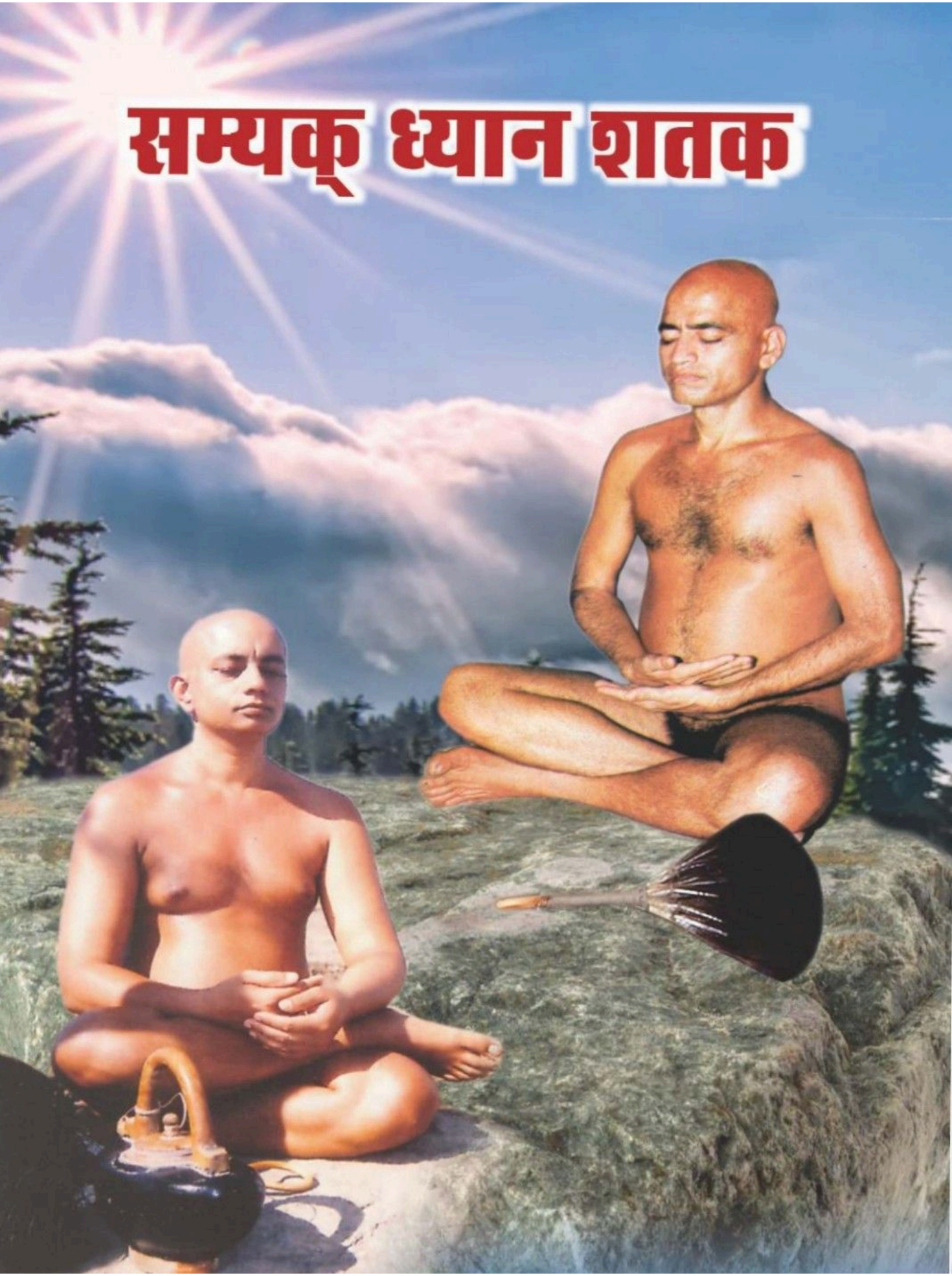

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादाएँ

क्र.	पदार्थ	शीत ऋतु अगहन से फाल्गुन	ग्रीष्म ऋतु चैत्र से आषाढ़	वर्षा ऋतु श्रावण से कार्तिक
1.	शक्कर का बूरा	1 माह	15 दिन	7 दिन
2.	दूध (दूहने के पश्चात्) दूध (उबालने के पश्चात्)	2 घड़ी 8 पहर	2 घड़ी 8 पहर	2 घड़ी 8 पहर
3.	दही (गर्म दूध का)	8 पहर	8 पहर	8 पहर
4.	छाछ (बिलोते समय गरम पानी डालें) छाछ (पीछे गरम पानी डालें तो)	4 पहर 2 घड़ी	4 पहर 2 घड़ी	4 पहर 2 घड़ी
5.	आटा (सर्व प्रकार)	7 दिन	5 दिन	3 दिन
6.	मसाले पिसे हुए	7 दिन	5 दिन	3 दिन
7.	नमक पिसा हुआ नमक मसाला मिला दें तो	2 घड़ी 6 घंटे	2 घड़ी 6 घंटे	2 घड़ी 6 घंटे
8.	खिचड़ी,रायता, कढ़ी, तरकारी, रोटी	2 पहर	2 पहर	2 पहर
9.	पूरी, हलवा, बड़ा आदि	4 पहर	4 पहर	4 पहर
10.	मौन वाले पकवान	8 पहर	8 पहर	8 पहर
11.	बिना पानी के पकवान	7 दिन	5 दिन	3 दिन
12.	मीठे पदार्थ मिला दही	2 घड़ी	2 घड़ी	2 घड़ी
13.	गुड़ मिला दही, छाछ और द्विदल	सर्वथा अभक्ष्य		
14.	घी, तेल एवं गुड़	जब तक स्वाद न बिगड़े		

एक घड़ी-24 मिनट की और 1 पहर-3 घंटे का होता है

साभार - आहार विधि

जाता है।

सद्भावनाओं के प्रकार

40. जहाँ भावना धर्म की, पच्चिस सोलह जान।
बारह, सप्त व चार भी, त्रि, द्वि, इक शुभ मान॥

जहाँ धर्म सम्बन्धी पच्चीस, सोलह, बारह, सात, चार, तीन, दो और एक इस तरह सत्तर प्रकार की सद्-भावनाएँ भावित की जाती हैं वहाँ उन्हें शुभभावना रूप मानना चाहिए।

❖

41. पांच-व्रतों की भावना, पांच-पांच पहचान।
दर्शनविशुद्धि आदि भी, सोलह-भावन मान॥

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह रूप व्रतों की रक्षा के लिए पांच-पांच-भावनाएँ जानो तथा दर्शन-विशुद्धि आदिक सोलह-भावनाएँ मानो।

❖

42. अनित्य आदिक-भावना, बारह-भावन जान।
शास्त्राभ्यास जिन-स्तुति, आदिक सात सु-मान॥

अनित्य आदिक अनुप्रेक्षाओं को बारह-भावना रूप जानो तथा शास्त्राभ्यास और जिनेन्द्र-स्तुति आदि के लिए सात-भावनाएँ मानो।

❖

43. मैत्री, प्रमोद-भावना, करुणा भी शुभ रूप।
मध्यस्थी-चौथी रही, मोक्षमार्ग-अनुरूप॥

मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ इन चार-भावनाओं के लिए मोक्षमार्ग के अनुरूप शुभ-भावनाएँ जानना चाहिए।

❖

44. समदर्शन वा ज्ञान, व्रत, रत्नत्रय हैं जान।
संवेगरु वैराग्य भी, शुभ-भावन पहचान॥

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इनको रत्नत्रय रूप तीन-भावनाएँ जानो तथा संवेग और वैराग्य इन दोनों को शुभभावना रूप मानो।

❖

45. आत्म-तत्त्व की भावना, एक-भावना नेक।
शिवसुख की ये भावना, करे आत्म-अभिषेक॥

अपनी आत्म-तत्त्व की भावना, एक-भावना बड़ी नेक-सुन्दर रूप शिव (मोक्ष) सुख देने वाली भावना; अपनी आत्मा का अभिषेक कर, अपनी आत्मा के अष्ट-कर्मों को धोकर, निर्मल-अवस्था को प्राप्त कराने वाली भावना कहलाती है।

आर्त्तध्यान का स्वरूप

46. अर्त्तितभाव ही आर्त्त है, जिसका दुःख है नाम।
अशुभ-बंध, हो दुर्गति, बिगड़ें धर्म सु-काम॥

अर्ति अर्थात् दुःख और ऐसे इष्ट-वियोग, अनिष्ट-संयोग, पीड़ा-चिंतवन और निदान नामक दुःख रूप ध्यानों को आर्त्तध्यान नाम से कहा जाता है। ऐसे आर्त्तध्यान को करने से धर्म के अच्छे कार्य बिगड़ जाते हैं और अशुभ-कर्मों का बंध होता है तथा आत्मा तिर्यंच आदि दुर्गतियों को प्राप्त करती है।

इष्टवियोग

47. जहाँ नष्ट हों इष्ट वे, पदार्थ या हों दूर।
कहाँ मिलेंगे, खेद यह, इष्ट-वियोगी पूर॥

जहाँ जब मन-पसंद पदार्थों या व्यक्तियों के दूर हो जाने पर, चोरी हो जाने पर या उन पदार्थों के समाप्त आदि हो जाने के सम्बन्ध में उनके कहाँ, कब मिलने रूप संयोग के लिए जो त्रिकाल-सम्बन्धी खेद, चिंता या विकलता होती है वहाँ तब इष्ट-वियोग नामक आर्त्तध्यान कहा जाता है।

अनिष्टसंयोग

48. जहाँ अनिष्ट-पदार्थ के, हट जाने का भाव।
अनिष्ट-संयोगी बने, मिलता नहीं स्वभाव॥

जहाँ जब अपसंद पदार्थों या व्यक्तियों के मिलने पर उनके या उनसे दूर हो जाने के सम्बन्ध में जो चिन्तवन उत्पन्न होता है उसे अपने वास्तविक स्वभाव से दूर रखने वाला अनिष्ट-संयोग नामक आर्त्तध्यान कहते हैं।

पीड़ा-चिन्तवन

49. तन की पीड़ा होय जब, रोगादिक हों मान।
रोग-भूख आदिक मिटें, पीड़ा-चिन्तन ध्यान॥

संसारी जीवों के मन में रोगादिक से शारीरिक कष्टों के सम्बन्ध में तथा भूख-प्यास आदि की वेदना को शमन करने के सम्बन्ध में जो विचार चलते हैं उसे पीड़ा-चिन्तवन नामक ध्यान कहा गया है।

निदान

50. इन्द्रादिक की सम्पदा, इन्द्रिय के वे भोग।
आगे हमको प्राप्त हों, यही निदान प्रयोग॥

अपने सांसारिक जीवन में इन्द्र, चक्रवर्ती, राजा और श्रेष्ठी आदि के सांसारिक वैभव या कहिए कि पंचेन्द्रिय के विषय भोगों की आगे मुझे प्राप्ति हो ऐसा विचार करना निदान नामक आर्त्तध्यान कहलाता है।

आर्त्तध्यान के गुणस्थान

51. प्रथम पाँच-गुणथान तक, सभी आर्त्त हों ध्यान।
छठवे उस गुणथान में, बिन निदान त्रय मान॥

मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयत-सम्यग्दृष्टि और संयतासंयत ऐसे पांच गुणस्थानों तक सभी चारों आर्त्तध्यान यथासंभव होते रहते हैं लेकिन प्रमत्त-संयत नामक मुनियों के छठे गुणस्थान में निदान को छोड़ कर इष्टवियोग, अनिष्टसंयोग और पीड़ाचिंतन ऐसे तीन आर्त्तध्यान यथा समय होना संभव है।

रौद्र-ध्यान का स्वरूप

52. रुद्र-भाव ही रौद्र है, क्रूर उठें परिणाम।
जिसको भी तजना कहूँ, तभी होय शुभ-ध्यान॥

रुद्र अर्थात् क्रूर-आशयरूप (हिंसानंद, मृषानंद, चौर्यानंद और परिग्रहानंद रूप) जो रौद्र-ध्यानात्मक परिणाम उत्पन्न होते हैं उनको छोड़ देना चाहिए तभी शुभ-ध्यान की उपलब्धि होती है।

हिंसानंद

53. जहाँ जीव का घात हो, ऐसा कार्य सहर्ष।
करना हिंसानंद है, जीवन ना आदर्श॥

जहाँ त्रस और स्थावर जीवों का घात होता है ऐसे कार्यों में हर्षित होना या अच्छा मानना हिंसानंद नामक रौद्रध्यान कहलाता है। ऐसे हिंसक (प्राणी वध, आरम्भादिक) कार्यों के करने वाले जीवों को लोग सदाचारी नहीं मानते।

मृषानंद

54. झूठ-वचन जो पाप हैं, उनका जहाँ प्रयोग।
मृषानंद वह ध्यान है, शुद्ध न हो उपयोग॥

जो असत्य-वचन पापरूप या हिंसा के कारण होते हैं उन्हें बोलना, बुलवाना आदि मृषानंद-ध्यान कहलाता है। ऐसा कार्य करने से अपनी आत्मा का उपयोग अशुद्ध या अशुभ रूप होता है।

चौर्यानन्द

55. पर-पदार्थ का हो हरण, छल-कपटी-मन होय।
चौर्यानन्दी-ध्यान है, दुर्गति में गम-जोय॥

दूसरों के धनादिक-हरण करने से मन छल व कपट वाला हो जाने से चौर्यानन्दी-ध्यान कहा जाता है, जो दुर्गतियों में पहुँचाकर बड़ा दुःखदायी होता है।

परिग्रहानन्द

56. इच्छाओं का जाल जो, बुने संग का भार।
परिग्रहानंदी बने, नारक-दुख्ख-मझार॥

जो आत्मा सांसारिक-भोगों की इच्छाओं का जाल फैलाकर परिग्रह का भार बढ़ाकर उसमें हर्ष मनाता है। वह मोही परिग्रहानन्द-रौद्र-ध्यानी बन नरक-आयु का आश्रव कर नरकों के बीच उत्पन्न होकर महादुःखों को पाता है।

रौद्रध्यान के गुणस्थान

57. प्रथम पाँच-गुणथान तक, सभी रौद्र हों ध्यान।
समकित, अणुव्रत हों जहाँ, तीव्र-रौद्र ना जान॥

प्रथम मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर संयतासंयत नामक पंचम गुणस्थान तक सभी रौद्र-ध्यान यथासंभव होते हैं लेकिन सम्यग्दर्शन और अणुव्रतों के साथ प्रशम, संवेग, अनुकम्पा और आस्तिक्य रूप चार गुणों की सम्पन्नता तथा स्थूल रूप से पांच पापों अथवा अन्याय, अनीति का त्याग होने से वे रौद्र-ध्यान तीव्र रूप में नहीं होते बल्कि अन्याय, अनीति को पराजित

करने हेतु किये जाते हैं। [जैसे- राम ने रावण की अन्याय, अनीति का खण्डन करने युद्ध किया था।]

धर्मध्यान का स्वरूप

58. आर्त्त, रौद्र को त्याग कर, करें धर्म-मय ध्यान।
राग-द्वेष वा पाप बिन, सामायिक पहचान॥

आर्त्त और रौद्र-ध्यानों को छोड़कर धर्मध्यान करना चाहिए। जिस धर्मध्यान में जब राग-द्वेष और पापों से रहित अवस्था होती है तब ध्यान की एक उच्च-अवस्था सामायिक की उपलब्धि होती है, ऐसा जानो।

❖

59. सदा धर्म-मय भाव हो, आवश्यक में लीन।
धर्म-ध्यान तब साथ हो, वही भव्य स्वाधीन॥

मुनियों से संबंधित सामायिक, स्तुति, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग रूप षट् आवश्यकों में तथा श्रावकों से सम्बन्धित वीतरागदेव-पूजन, निर्ग्रन्थगुरु-उपासना, चार-अनुयोगों का स्वाध्याय, प्राणी-रक्षा रूप संयम, उपवास और रसादि के त्याग रूप तप में एवं आहार, औषध, उपकरण और आवास रूप चार तरह के दान रूप षट् कर्मों में जो धर्ममय शुभ-भाव होता है उसे धर्मध्यान कहते हैं। ऐसा धर्मध्यान करने से भव्यात्मा को स्वाधीन आनंद रूप अवस्था की प्राप्ति होती है।

धर्मध्यान के भेद

60. आज्ञा-विचय, अपाय भी, अरु विपाक, संस्थान।
चार धर्म ये ध्यान हैं, जग में शुभ हैं ध्यान॥

39 / 90

आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थानविचय ये चारों धर्म-ध्यान जगत् में शुभ-ध्यान माने गये हैं।

आज्ञाविचय

61. वीतराग की देशना, द्रव्य, तत्त्व-उपदेश।
रत्नत्रय-मय मोक्षमग, गहें मान आदेश॥

वीतराग (तीर्थंकर या अरिहंत भगवान) की वाणी से प्राप्त छहद्रव्य, सप्ततत्त्व और सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र रूप रत्नत्रय-मय मोक्षमार्ग का जो उपदेश है उसे हम आदेश समान मानकर श्रद्धा से आत्म-कल्याण हेतु स्वीकार करें, यही चिंतवन की विचारधारा आज्ञाविचय-धर्मध्यान कही जाती है।

अपायविचय

62. दुख-मय यह संसार है, कुदर्श पाँचों-पाप।
छोड़ें यही अपाय है, ध्यानी दें जिन-जाप॥

रोग, भूख, प्यास, ठण्डी, गर्मी आदिक रूप शारीरिक दु:ख कटु व तिरस्कार आदि वचन रूप वाचनिक दु:ख एवं चिंता एवं भोगाकांक्षादि रूप मानसिक दु:ख से परिपूर्ण इस संसार को एवं ऐसे दुखदायी संसार के कारण स्वरूप एकान्त, विपरीत, वैनयिक, संशय और अज्ञान रूप पंच-मिथ्यात्वों को तथा हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह रूप पंच-पापों से यह संसारी आत्मा कब मुक्त होगी ऐसा चिंतवन करना अपायविचय-धर्मध्यान कहलाता है। इस कार्य की सफलता हेतु जिनेन्द्र-प्रभु के नाम की जाप देना सर्वश्रेष्ठ समझना चाहिए।

विपाकविचय

63. कर्मों का जो पाक-फल, भव-सुख, दुख दे जान।
लख-चौरासी योनि में, चउगति-भ्रमत अजान॥

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय इन अष्ट-कर्मों का क्रमशः ज्ञान में बाधक बनना, दर्शन न होने देना, संसार से मोहित (आकृष्ट) करना, सुख-दुःख का अनुभव करना, एक-गति में रोके रहना, सुन्दर, असुन्दर शरीर प्राप्त कराना, उच्च-नीच कुल में पैदा कराना और दान, लाभ, भोग, उपभोग तथा शक्ति में बाधा उत्पन्न कराने रूप फल इस चतुर्गति रूप संसार में यह अज्ञानी आत्मा भोगता हुआ चौरासीलाख योनि रूप चतुर्गति-संसार में अनंतकाल तक परिभ्रमण करता रहता है इत्यादि रूप-चिंतवन करना विपाकविचय धर्म-ध्यान कहलाता है।

संस्थानविचय

64. तीन-लोक का सब गणित, शुद्ध-द्रव्य उपयोग।
मुनि संस्थान-विचय करें, ध्यान रहा सद्योग॥

तीनों-लोकों की रचना का सम्पूर्ण-गणित या राजू एवं योजन आदि के रूप में लोक के प्रमाण तथा द्रव्यों के शुद्धस्वरूप और आत्मा के शुद्धोपयोग की प्राप्ति में निमित्त पदस्थ, पिण्डस्थ, रूपस्थ व रूपातीत ध्यानों का मुनियों के द्वारा चिंतवन किया जाना संस्थानविचय-धर्मध्यान रूप उत्तम-योग कहलाता है।

संस्थानविचय के भेद

65. पदस्थ अरु पिंडस्थ वा, हैं रूपस्थ सु-ध्यान।
रूपातीत महान ये, शिव-सुख दें कल्याण॥

संस्थान-विचय के भेदरूप पदस्थ, पिण्डस्थ, रूपस्थ और रूपातीत-ध्यान ये महान हैं और ये शुक्लध्यान के साधन बनकर मोक्ष-सुख प्रदान कर आत्मा का कल्याण करते हैं।

पदस्थध्यान

66. मंत्र-वाक्य का ध्यान हो, वीतराग शुभ रूप।
पदस्थ जानो ध्यान वह, हो एकाग्र स्वरूप॥

वीतराग शुभ रूप णमोकार-मंत्र आदि वाक्यों या पदों का ध्यान पदस्थ-ध्यान कहलाता है जिस ध्यान से एकाग्र स्वरूप की प्राप्ति होती है।

❖

67. णमोकार शुभ-मंत्र है, सब मंत्रों का राज।
शीघ्र अशुभ-विधि-नाशकर, सिद्ध बनावे काज॥

सर्व-वीतराग मंत्रों में प्रधान राजा-सदृश णमोकार-मंत्र माना गया है जो मंत्र सर्व पाप-कर्मों का शीघ्र ही क्षय करके परमेष्ठी रूप सिद्ध-पद को प्रदान करा देता है।

❖

68 ओम् महा यह मंत्र है, परमेष्ठी का बीज।
द्वादशांग-सागर कहें, भव-सुख, शिव की चीज॥

'ओम्' (ॐ) भी यह महामंत्र पंच-परमेष्ठियों के सम्पूर्ण-अर्थ को धारण करने वाला बीज के समान है और द्वादशांग रूप शास्त्र के सागर को धारण करने वाला होता हुआ संसार में जीवों को सुखी करते हुए मोक्ष-सुख तक पहुँचानेवाला है।

❖

69. हूँ अक्षर जिन बुद्ध वा, हरि ब्रह्मा शिव रूप।
केवलज्ञानी, सार्वमय, जगत्-वंद्य सुख रूप॥

'हूँ' यह अक्षर जिनेन्द्र स्वरूप वीतराग बुद्ध, हरि, ब्रह्मात्मा और शिव अर्थात् मोक्ष स्वरूप, केवलज्ञानी, सर्वज्ञ और जगत् से पूज्य होते हुए सुख-शान्ति का प्रदाता माना गया है।

❖

70. अर्हं-अक्षर श्रेष्ठ है, अर्हत्-पद का नाम।
पूज्य रहे जो लोक में, ध्यावें, बनते काम॥

'अर्हं' यह अक्षर सर्वश्रेष्ठ अर्हंत्-पद का वाचक है जो अरहंत पूर्णलोक में पूज्य माने गये हैं ऐसे अरिहंतों का ध्यान करने से पाप-कर्मों का क्षय होता है और पुण्य बढ़ने से सभी शुभ-कार्यों की सिद्धि होती है।

❖

71. ह्राँ रहा अरिहंत का, वाचक श्रेष्ठ महान।
घातिकर्म का नाश कर, जीवन-मुक्त सुजान॥

'ह्राँ' यह अक्षर भी अरिहंत-परमेष्ठी का वाचक श्रेष्ठ व महान है जो घातिया-कर्मों का नाश करने वाले और पुनर्जन्म न लेने वाले, जीवन-मुक्त ऐसे अरिहंतों का ज्ञान करवाता है; ऐसा ध्यान करो।

❖

72. ह्रीं रहा श्री सिद्ध का, वाचक श्रेष्ठ महान।
अष्ट-कर्म का नाशकर, गुण अनन्त की खान॥

अष्ट-कर्मों का क्षय कर जो अनन्त-गुणों के भण्डार बने ऐसे सिद्ध-भगवन्तों का वाचक 'ह्रीं' अक्षर श्रेष्ठ व महान है।

❖

73. हूँ रहा आचार्य का, वाचक श्रेष्ठ महान।
पंचाचार-प्रधान हैं, करें सर्व-कल्याण॥

पंचाचारों का जो मुख्यत: पालन करते हैं और सभी भव्यों के लिए रत्नत्रय-प्रदान करते हुए उनका कल्याण करते हैं, ऐसे आचार्य-परमेष्ठी का वाचक 'हूँ' अक्षर श्रेष्ठ व महान है।

❖

74. ह्रौं श्रेष्ठ वाचक सुधी, उपाध्याय का नाम।
द्वादशाङ्ग के ज्ञान से, मुनि पाते शिवधाम॥

शिव अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति के पथ पर चलने वाले द्वादशांग के ज्ञानी-सुधी-उपाध्याय-परमेष्ठी रूप मुनिवर का वाचक 'ह्रौं' अक्षर श्रेष्ठ व महान है।

❖

75. ह्रः अक्षर यह साधु का, वाचक श्रेष्ठ महान।
रत्नत्रय से आत्म में, लीन करें निज-ध्यान॥

रत्नत्रय का पालन कर आत्मा में लीन होकर निज का ध्यान करने वाले निर्ग्रन्थ साधु-परमेष्ठी का वाचक 'ह्:' अक्षर श्रेष्ठ व महान है।

❖

76. अग्र ओम् पीछे जहाँ, नमः लगावें साथ।
उपरिम अक्षर-जाप दें, बनें लोक में नाथ॥

उपरिम अक्षर 'ह्रीं' आदिक के पहले 'ओम्' (ॐ) अक्षर लगाकर तथा उन 'ह्रीं' आदिक के बाद 'नमः' लगाकर जाप-जपने से कर्मों का क्षयकर आत्मा लोक के नाथ अर्थात् सिद्धों के पद को परम्परा से प्राप्त कर लेता है।

पिण्डस्थध्यान

77. निजात्म के सम्बन्ध से, सद्गुण-गण का ध्यान।
कहा ध्यान पिंडस्थ वह, जिसमें निज-कल्याण॥

अपनी-आत्मा में लीन होकर अपने ही गुणों का ध्यान करना पिण्डस्थ-ध्यान कहलाता है जिस ध्यान में ही अपनी-आत्मा के कल्याण का रहस्य छुपा होता है।

❖

78. दर्शन, सुख, चारित्र-मय, दश-धर्मों से पूर्ण।
शक्ति अनन्त सुकोष निज, गुण अनन्त संपूर्ण।

दर्शन, सुख, चारित्रमयी अपनी-आत्मा उत्तम-क्षमा आदिक दश-धर्मों से परिपूर्ण है तथा अनन्त-शक्तियों का खजाना है और अनन्त-गुणों का धाम है ऐसा चिंतवन करना पिण्डस्थ-ध्यान कहलाता है।

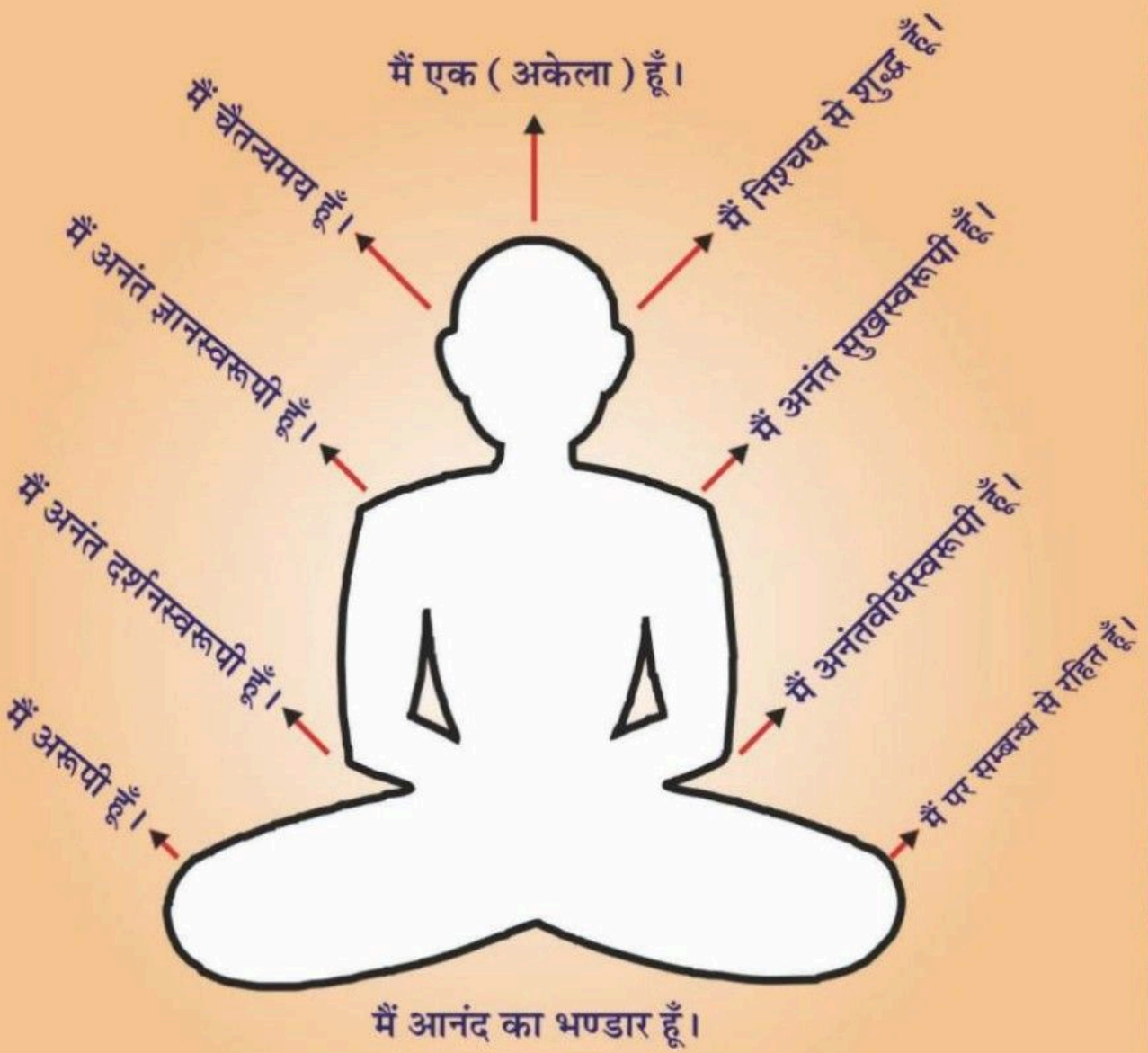
मैं एक (अकेला) हूँ।
मैं चैतन्यमय हूँ।
मैं निश्चय से शुद्ध हूँ।
मैं अनंत ज्ञानस्वरूपी हूँ।
मैं अनंत सुखस्वरूपी हूँ।
मैं अनंत दर्शनस्वरूपी हूँ।
मैं अनंतवीर्यस्वरूपी हूँ।
मैं अरूपी हूँ।
मैं पर सम्बन्ध से रहित हूँ।
मैं आनंद का भण्डार हूँ।

तत्त्वधारणा